International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 5, May - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया के रूप मे संस्कृतिकरण : एक आलोचनात्मक विश्लेषण

प्रमोद वर्मा
शोध छात्र (समाजशास्त्र)
हिन्दू कॉलेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश

डॉ0 आर0के0 ठाकुर
एसोसिएट प्रोफेसर
स्नात्कोत्तर समाजशास्त्र विभाग
हिन्दू कॉलेज, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश

सारांश

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। मानव–समाज भी प्रकृति का अभिन्न अंग है। इसलिए मानव समाज भी परिवर्तन से अछूता नहीं है। यही कारण है कि कल जो मानव समाज का स्वरूप था, वह आज नहीं है और जो आज है वह भविष्य में नहीं रहेगा। यह और बात है कि परिवर्तन की गति और दिशा प्रत्येक समय व समाज में एक जैसा नहीं होता। कहीं इसकी गति तीव्र होती है तो कहीं धीमी। भारतीय समााज तुलनात्मक रूप से कम परिवर्तनशील है। समाज में होने वाला कोई भी संरचनात्मक–प्रकार्यत्मक बदलाव सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन है। परिवर्तन की कई प्रक्रियाएँ हैं, जिनमें संस्कृतिकरण भी एक प्रक्रिया है, जो विशेषकर भारतीय सन्दर्भ में प्रचलित है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत निम्न हिन्दू, जनजाति व अन्य समूह उच्च जाति विशेषकर प्रबल जाति के जीवन शैली, विचार व संस्कार अपनाकर अपनी जाति की स्थिति उच्च साबित करने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन यह हमेशा सत्य नहीं है, क्योंकि उच्च जातियाँ भी निम्नजातियों की जीवन शैली का अनुकरण करते हैं। इस प्रक्रिया के द्वारा सिर्फ समाज में पदमूलक परिवर्तन होते हैं न कि संरचनात्मक परिवर्तन। कुछ समाजशास्त्री संस्कृतीकरण को भारतीय समाज में होने वाले परिवर्तनों के विश्लेषण के लिए महत्वपूर्ण मानते हैं, जबकि कुछ इसे समाजशाास्त्रीय अवधारणा ही नहीं

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। कल जो था वह आज वैसा नहीं है और आज जो है कल वह ऐसा ही नहीं रहेगा। परिवर्तनकी इसी निरन्तरता एवं अवश्यम्भाविता के संदर्भ में कहा गया है कि एक व्यक्ति एक ही नदी में दुबारा स्नान नहीं कर सकता, क्योंकि दूसरी बार व्यक्ति और नदी दोनों बदले हुए होते हैं। मानव समाज भी परविर्तन की प्रक्रिया से अछूता नहीं है। यही कारण है कि वह आदिम समाज के घुमन्तू जीवन से अत्याधुनिक समाज में पहुँच गया है। यह दूसरी बात है कि परिवर्तन की गति व दिशा भिन्न–भिन्न समयों व समाजों में भिन्न–भिन्न रही है। यह सत्य है कि विकसित व पाश्चात देशों की तुलना में भारतीय समाज–तुलनात्मक रूप से कम परिवर्तनशील है। इसी विशेषता के कारण कई समाज वैज्ञानिक भारतीय समाज को विशेषकर ग्रामीण समुदाय को स्थिर समाज मानते हैं। जैसा कि नजमुल करीम ने अपनी पुस्तक ''चेंजिंग सोसायटी इन इण्डिया एण्ड पाकिस्तान'' में भारत के बारे में लिखा है ''एक राजवंश के बाद दूसरा राजवंश खत्म होता गया, क्रान्ति के बाद क्रान्ति होती गई ..... परन्तु ग्रामीण समुदाय वैसे ही है।'' एस0वी0 केतकर,डी0एन0 मजूमदार एवं टी0एन0मदन जैसे समाज वैज्ञानिकों का मन्तव्य है कि भारतीय समाज गतिहीन समाज है, क्योंकि जाति–एक बंद वर्ग है, जो अपरिवर्तशील सामाजिक स्तरीकरण का प्रतीक है। लेकिन ऐसा मानना अति सरलीकरण होगा। व्यक्ति कीजाति नहीं बदलती लेकिन जाति की स्थिति बदलती रहती है। प्रारम्भ से ही सामाजिक परिवर्तन का विमर्श समाजशास्त्रियों के लिए केन्द्रीय महत्व का रहा है।

समाजिक परिवर्तन को कुछ विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं के आलोक में समझा जा सकता है। मैकाइवर एण्ड पेज[1]के शब्दों में ''समाजशास्त्री होने के नाते हमारा प्रत्यक्ष सम्बन्ध सामाजिक सम्बन्धों से है और उसमें आए हुए परितर्वन को हम सामाजिक परिवर्तन कहेंगे।'' इसी प्रकार किंग्सले डेविस[2] के अनुसार ''सामाजिक परिवर्तन का तात्पर्य सामाजिक संगठन अर्थात् समााज की संरचना एवं प्रकार्यों में परितर्वन है।'' इरविन एम0 जेटलिन[3] ने लिखा है कि

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 5, May - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

''सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन उस प्रक्रिया से सम्बद्ध है, जिसके द्वारा समाज व संस्कृति में रूपान्तरण होता है।'' गिलिन एवं गिलिन[4] के अनुसार ''सामाजिक परिवर्तन जीवन की स्वीकृत रीतियों में घटित परिवर्तन को कहते हैं, चाहे परिवर्तन भौगोलिक दशाओं, सांस्कृतिक साधनों, जनसंख्या की रचना या विचारधाराओं में परिवर्तन से उत्पन्न हुआ हो, ओर चाहे प्रसार के द्वारा अथवा समूह के अन्तर्गत हुए आविष्कारों के परिणामस्वरूप संभव हुआ है।''

उक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता ह कि समाज व संस्कृति के संरचनात्मक–प्रकार्यात्मक पक्षों में होने वाला कोई भी बदलाव सामाजिक परिवर्तन है। सामाजिक परिवर्तन सामूहिक परिवर्तन से सम्बद्ध है न कि व्यक्तिगत परिवर्तन से। सामाजिक परिवर्तन सार्वभौमिक है। सामाजिक परिवर्तन की गति अनियमित तथा सापेक्षिक हेाती है। सामाजिक परिवर्तन के विविध स्वरूप होते हैं। रेखीय, चक्रीय व तरंगीय।सामाजिक परिवर्तन के अनेक कारक होते हैं तथा सामाजिक परितर्वन की कोई निश्चित भविष्यवाणी नहीं की जा सकतो है।

सामान्यतः सामाजिक परिवर्तन व सास्कृतिक परिवर्तन को समान समझ लिया जाता है, जबकि दोनोंके बीच अन्तर है, जो निम्न प्रकार है :–

सामाजिक परिवर्तन मात्र सामाजिक सम्बन्धों, सामाजिक संरचना तथा प्रकार्यों में परितर्वन है, जबकि सांस्कृतिक परिवर्तन धर्म, ज्ञान, विश्वास, कला, साहित्य, प्रथा, परम्परा, जनरीति आदि में होने वाले परिवर्तन हैं।

सामाजिक परिवर्तन चेतन एवं अचेतन दोनों के परिणामस्वरूप होते हैं, जबकि सांस्कृतिक परिवर्तन प्रायः सचेत प्रयत्नों के परिणाम होते हैं।

सामाजिक परिवर्तन की गति तेज भी हो सकती है, जबकि सांस्कृतिक परिवर्तन की गति तुलनात्मक रूप से धोमी होती है।

उक्त अन्तरों के बावजूद सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन एक दूसरे से घनिष्ट प्रकार से सम्बद्ध हैं, क्योंकि एक में परितर्वन दूसरे को अवश्य प्रभावित करता है। इसलिए सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन साथ–साथ चलने वाली प्रक्रिया है।

भारतीय समाज में सामाजिक सांस्कृतिक परितर्वन की कई प्रक्रियाएँ जारी है, जिनमें **नगरीकरण, औद्योगोकरण, पश्चिमीकरण, आधुनिकीकरण, लौकिकीकरण** तथा **संस्कृतिकरण**आदि प्रमुख हैं। यहाँ हमारा उद्देश्य सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन की प्रक्रिया के रूप में संस्कृतिकरण का आलोचनात्मक विश्लेषण करना है।

भारत में अंग्रेजों के आगमन और इसके परिणाम स्वरूप भारतीय समाज में हुए सामाजिक–आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासनिक परिवर्तनों के कारण भारतीय समाज का आन्तरिक संतुलन बिखरने लगा और प्रचलित परम्परागत जाति व्यवस्था में परिवर्तन शुरू हुई। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि जातियाँ इतिहास में जड इकाई नहीं रही हैं। जातियां और उनके बीच के समीकरण समय–समय पर बदलते रहे हैं। जैसा कि डॉ0 राम मनोहर लोहिया[5] ने लिखा है ''शक्ति और समृद्धि हर युग में बराबर एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में बदलती रही है। कोई भी सदा इतिहास की उच्चत्तम चोटी पर नहीं बैठा रहा है।'' जाति व्यवस्था के इसी पद सोपानात्मक परिवर्तन के रूप में एम0एन0 निवास ने संस्कृतिकरण की अवधाारणा का विश्लेषण किया है।

एम0एन0 श्री निवास ने 'संस्कृतिकरण' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग मैसूर के रामपरा गाँव के कुर्ग लोगों के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन में होने वाले परिवर्तनों के विश्लेषण के लिए किया था। उन्होंने पाया कि निम्न जातियों के लोगों ने ब्राह्मणों की प्रथाओं, कर्मकाण्ड़ों, जीवन पद्धतियों, भोजन सम्बन्धी शाकाहारी आदतों, वेशभूषा आदि का अनुकरण करके जाति संस्तरण में एक–दो पीढ़ियों के बाद उच्च स्थिति प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं। प्रारम्भ में श्री निवास ने अपनी पुस्तक 'रिलिजन एण्ड सोसाइटी अमंग द कुर्गस ऑफ साउथ इण्डिया' में इसके लिए ''**बाह्मणोकरण**'' शब्द का

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 5, May - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

प्रयोग किया,क्योंकि उन्होंने पाया कि कुछ लिंगायत, जोकि विश्वकर्मा को अपना ईष्ट देव मानते थे, वे ब्राह्मणों की सम्यता और संस्कृति को अपना रहे हैं। जैसे ब्राह्मणों की भाँति उपनयन धारण करने लगे, मॉस–मदिरा का सेवन बन्द कर दिया, विद्यवा पुनर्विवाह पर रोक लगा दी और बाल–विवाह करने लगे। परन्तु बाद में कई समाजशास्त्रियों जैसे डी0एफ0 पोकॉक, मिल्टन सिंगर आदि ने यह बताया कि निम्न जातियाँ सिर्फ ब्राह्मणों की ही नहीं बल्कि क्षत्रिय, वैश्य व अन्य प्रबल जातियों की संस्कृति ओर जीवन शैली को अपना रही है। इसलिए श्री निवास ने ''**ब्राह्मणीकरण**'' के स्थान पर ''**संस्कृतिकरण**'' शब्दावली का प्रयोग उचित समझा। श्री निवास[6] संस्कृतिकरण को परिभाषित करते हुए लिखा है ''संस्कृतिकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई निम्न हिन्दू जातियाँ, जनजाति अथवा अन्य समूह किसी उच्चजाति और प्रायः द्विज जाति की दिशा में अपने रीति–रिवाज, कर्मकाण्ड, विचारधारा और जीवन पद्धति को बदलता है। आमतौर पर ऐसे परिवर्तनों के पश्चात् वह जाति, परम्परा से स्थानीय समाज द्वारा संस्तरण में जो स्थान उसे मिला हुआ है, उसमें ऊँचे स्थान का दावा करने लगती है। साधारणतः बहुत दिनों तक, बल्कि वास्तव में एक–दो पीढ़ियों तक दावा किए जाने के बाद ही उसे स्वीकृति मिलती है। कभी–कभी जाति ऐसे स्थान का दावा करने लगती है, जो उसके पड़ोसी मानने को तैयार नहीं होते है।'' इस प्रकार कहा जा सकता है कि ''संस्कृतिकरण के साथ–साथ और प्रायः उसके परिणाम स्वरूप सम्बद्ध जाति ऊपर की ओर गतिशील होती है, पर गतिशीलता संस्कृतिकरण के बिना भी अथवा गतिशीलता के बिना संस्कृतिकरण भी सम्भव है। किन्तु संस्कृतिकरण से सम्बद्ध गतिशीलता के परिणाम स्वरूप व्यवस्था में केवल **पदमूलक परिवर्तन** ही होते है, कोई **संरचनात्मक परिवर्तन** नहीं। अर्थात् एक जाति अपने आस–पास की जातियों से ऊपर उठ जाती है, और दूसरी जाति नोचे आ जाती है, पर यह सब एक अचल सोपान में घटित होता है। स्वयं व्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं होता।''[7]

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर संस्कृतिकरण की निम्न विशेषताओं का उल्लेख किया जा सकता है:–

1. संस्कृतिकरण का सम्बन्ध प्रायः निम्न व मध्य जातियों से है।
2. संस्कृतिकरण की प्रक्रिया से सम्बन्धित जातियों का पदमूलक परिवर्तन होता है न कि संरचनाात्मक परिवर्तन।
3. संस्कृतिकरण की प्रक्रिया केवल निम्न हिन्दू जातियों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि जनजातियों तथा अन्य समूहों में भी पायी जाती है।
4. संस्कृतिकरण के कई आदर्श हो सकते हैं, यथा ब्राह्मण, क्षत्रिया, वैश्य व अन्य क्षेत्रीय प्रबल जातियाँ।
5. संस्कृतिकरण भारतीय संदर्भ में सार्वकालिक प्रक्रिया रही है। के0एम0 पणिक्कर[8] का कथन है कि ''ईसा पूर्व पाँचवी शताब्दी में ही सच्चे क्षत्रियों का अंतिम वंक्ष (नन्द वंश) समाप्त हो गया था। इसके बाद प्रत्येक राजपरिवार किसी न किसी अक्षत्रिय जाति से आया है।'' आधुनिक काल में मराठे, रेड्डी, यादव, कुर्मी, कुशवाहा, जाट, गुर्जर, शाक्य आदि क्षत्रिय होने का दावा करते हैं, जबकि नाई, बढ़ई, लोहार,, कुम्हार, माली आदि ब्राह्मण होने का तथा तेली, तमोली आदि वैश्य होने का दावा करते हैं।
6. संस्कृतिकरण से सम्बद्ध जातियाँ ब्राह्मण साहित्य में उपलब्ध विचारों एवं मूल्यों यथा पाप–पुण्य, स्वर्ग–नरक, धर्म–कर्म, माया–मोक्ष आदि शब्दावली का प्रयोग अपनी बोल–चाल में करने लगते हैं।
7. सस्कृतिकरण के द्वारा अपनी स्थिति में परिवर्तन के लिए जातियाँ दो–तीन पीढ़ी पूर्व से ही अपना सम्बन्ध किसी उच्च वंशावली या स्थापित महापुरूष से बताते हैं। जैसे यादव अपना सम्बन्ध कृष्ण से तो कुर्मी विष्णु अवतार कुर्मावत से, जबकि कुशवाहा राम पुत्र कुश से।
8. संस्कृतिकरण की प्रक्रिया संस्कृतिकरण से गुजरने वाली जातियों की उच्चाकाँक्षा का प्रयत्न का सूचक है। प्रो0 योगेन्द्र सिंह ने इसे विचारधारा ग्रहण करने वाली प्रक्रिया माना है।

9. संस्कृतीकरण एक प्रकार का सामाजिक–सांस्कृतिक विरोधी आन्दोलन है, क्योंकि इसके अन्तर्गत उच्च सामाजिक प्रस्थिति प्राप्त करने की प्रतिस्पर्द्धा होती है।
10. संस्कृतिकरण हिन्दू बृहत परम्परा की सोपान क्रम विश्वदृष्टि का विरोध करती है, क्योंकि परम्परा से हिन्दू धर्मावलम्बी हर जातियों की स्थिति जन्म से निधारित होती है, जो कि अपरिवर्तनीय है।
11. संस्कृतिकरण कोई सहज व अनवरत चलने वाली प्रक्रिया नहीं है, क्योंकि पूर्व से उच्च स्थिति प्राप्त प्रबल जातियाँ इसका विरोध व्यंग व कभी–कभी संघर्ष के द्वारा भी करती हैं।
12. संस्कृतिकरण सामान्यतः उन जातियों में चलती है, जो शिक्षा, राजनीति व आर्थिक क्षेत्र में पूर्व की तुलना में प्रगति करने लगती हैं।
13. संस्कृतिकरण आर0के0 मर्टन का संदर्भ समूह व्यवहार से मिलती–जूलती प्रक्रिया है। यही कारण कि प्रो0 योगेन्द्र सिंह ने संस्कृतिकरण को **अग्रिमसमाजीकरण**माना है।
14. संस्कृतिकरण अनेक अवधारणाओं का गुच्छा है, क्योंकि इसमें ब्राह्मीकरण, पर–संस्कृतिग्रहण, अग्रिम समाजीकरण, अनुकरण आदि धारणाओं के तत्व मौजूद हैं।

संस्कृतिकरण के परिणाम स्वरूप भारतीय समाज के कई क्षेत्रों मे परिवर्तन आए हैं। उदाहणार्थ मध्य व निम्न जातियों की जीवन शैली में परिवर्तन, जाति नियमा की कठोरता में कमी, शक्ति संरचना में परितर्वन, स्थानीय गतिशीलता में वृद्धि, कर्मकाण्डों और रूढ़िवादिता में वृद्धि, अन्तर्जातोय तनाव व संघर्ष में वृद्धि आदि।इतना ही नहीं इसके कारण सामाजिक संस्थाओं, जाति–प्रथा, परिवार, विवाह, स्त्रियों की स्थिति, खान–पान, रहन–सहन व व्यवहार के प्रतिमान, राजनीतिक, धार्मिक, शिक्षा, साहित्य, नृत्य, संगीत, कला, आर्थिक, यहाँ तक की वैचारिकी क्षेत्र में भी परिवर्तन आए हैं।

उक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि निसन्देह संस्कृतिकरण परिवर्तन की एक प्रक्रिया है। लेकिन इससे किस प्रकार के परिवर्तन होते हैं इसका उत्तर देते हुए स्वयं श्री निवास लिखते हैं कि संस्कृतिकरण से जो सामाजिक गतिशीलता आती है, उससे केवल पदमूलक परिवर्तन आते हैं, संरचनात्मक परिवर्तन नहीं। इतना ही नहीं उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि सामाजिक गतिशीलता संस्कृतिकरण के बिना भी सम्भव है और गतिशीलता के बिना भी संस्कृतिकरण सम्भव है। इसलिए संस्कृतिकरण भारतीय समाज में हो रहे परविर्तनों की व्याख्या करने में अधिक उपयोगी नहीं है। यही कारण है कि कई विद्वानों ने श्री निवास की संस्कृतिकरण की अवधारणा की आलोचना की है, जो निम्नवत है–

संस्कृतिकरण की अवधारणा में स्पष्टता, सुनिश्चितता एवं तर्क संगतता का अभाव है। इसलिए ऐसी अवधारणा के आधार पर सामाजिक परितवन के सिद्धान्त का निर्माण संभव नहीं है। स्वयं श्रीनिवास[9] ने स्वीकारते हुए लिखा है, ''इसमें कोई सन्देह नहीं कि संस्कृतिकरण एक बेढगा शब्द है। भारतीय समाज के विश्लेषण में एक उपकरण के रूप में संस्कृतिकरण की उपयोगिता इस अवधारणा की जटिलता और इसके ढीलेपन के कारण सीमित है, संस्कृतिकरण एक अति जटिल विभिन्न तत्वीय अवधारणा है।'' एफ0जी0 बेली तथा डी0एन0 मजूमदार ने संस्कृतिकरण को अनुपयुक्त, असंगत तथा ढीली अवधारणा कहा है।

श्री निवास ने संस्कृतिकरण को एक तरफी प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत किया है, जबकि संस्कृतिकरण दोतरफी प्रक्रिया है। संस्कृतिकरण के अन्तर्गत न सिर्फ निम्न जाति के लोग उच्च जाति की जीवन शैली का अनुकरण करते हैं, बल्कि उच्च जाति के लोग भी निम्न जाति का अनुकरण करते हैं, जिसे समाजशास्त्रियों ने **अ–संस्कृतिकरण** कहा है। मैकिम मैरियट ने इसी ''**संकीर्णीकरण**'' कहा है। एस0एल0 कालिया ने उत्तर प्रदेश के जौनसार–बाावर व छत्तीस गढ़ के बस्तर जिला के जनजातियों के अध्ययन के आधार पर ''**जनजातिकरण**'' की प्रक्रिया का उल्लेख करते हुए लिखा है कि

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 5, May - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

''जनजाजियों के बीच अस्थायी रूप से रहने वाले उच्च जातियों के हिन्दू उनके ऐसे रीति–रिवाज, कर्मकाण्ड और विश्वास अपना लेते हैं, जो उनके रीति–रिवाजों से बिल्कुल भिन्न होते हैं।''

संस्कृतिकरण की प्रक्रिया हमेशा सकारात्मक ही नहीं होती। समाज में ऐसे भी लोग हैं, जो उच्ची जाति की जीवन शैली से घृणा करते हैं। गोपाल गुरू[10] के अनुसार बोसवीं सदी के शुरूआत में महाराष्ट्र में महारों ने उच्ची जाति के जीवन मूल्यों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया। हेमन्त कुमार[11] लिखते हैं वास्तव में संस्कृतिकरण को अपनाने वाली नीची जातियों में नकारात्मक चेतना का ही विकास हुआ है। इसलिए संस्कृतिकरण को एक ऐसा मॉडल मानना गलत है, जो नीची जातियों की स्थिति को ऊँचा उठाती है।''

श्री निवास का संस्कृतिकरण की अवधारणा अनिश्चित है, क्योंकि इसके अन्तर्गत एक साथ कई प्रक्रियाओं का बोध होता है, जैसे–**ब्राह्मणीकरण पर–संस्कृतिकरण, अ–संस्कृतिकरण, पूर्वाभ्यासो सामजीकरण, संकीर्णीकरण** आदि।

कांचा इलैय्या[12] ने संस्कृतिकरण को उत्तर औपनिवेशिक ब्रह्मणवादी समाजशास्त्र द्वारा पैदा की गई अवधारएा माना है, जिसमें अनुत्पादक ब्रह्मणों को''**शुद्ध**'' माना गया है, जबकि उत्पादक बहुजन जातियों को **दूषित** माना गया है। इलैय्या यह प्रश्न खड़ा करते हैं कि यदि पुरे समाज का संस्कृतिकरण हो जाएगा तो उत्पादन कार्य कौन करेगा?''

निष्कर्षतः कहा जा सकता है श्री निवास का संस्कृतिकरण की अवधारणा विवादास्पद है। जहाँ मिल्टन सिंगर जैसे विद्वानों ने इसकी प्रशंसा करते हुए कहा है कि संस्कृतिकरण का विचार भारतीय समाज में सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन का एक अत्यन्त विस्तृत तथा मान्य सिद्धान्त है, वहीं अधिकांश समाजशास्त्रियों ने इस अवधारणा को सामाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से बहुत कमजोर बताया है। उनका मानना है कि इसके विश्लेषण में वैज्ञानिकता का घोर अभाव है। तथ्यों का संकलन और विश्लेषण सतही स्तर पर किया गया है। विचारों एवं तर्कों का आधाार शब्दजाल है तथा उनका यह विश्लेषण एक तरह की वैयक्तिक अनुभूति है। अतः सामजशास्त्रीय दृष्टिकोण से इसका महत्व नगण्य है।

सन्दर्भ

1. मैकाइवर एण्ड पेज 'सोसाइटी' मैकमिलन, इण्डिया लिमिटेड, न्यू देल्ही, 1984, पृ0सं0– 51।
2. किंग्सले डेविस, 'ह्यूमन सोसाइटी', मैकमिलन, न्यूयार्क 1949, पृ0सं0–622।
3. इरविन एम0 जेटलिन, 'द सोशल कन्डीशन ऑफ ह्यूमनिटी', ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस न्यूयार्क, 19881, पृ0सं0–352।
4. जे0एल0 गिलिन एण्ड जे0पी0 गिलिन, 'कल्चरल सोशियोलॉजी', मैकमिलन, न्यूयार्क, 1950, पृ0सं0–561–62।
5. डॉ0 राम मनोहर लोहिया : इतिहास चक्र, लहर प्रकाशन इलाहाबाद,1955, पृ0सं0–51।
6. एम0एन0 श्रीनिवास, 'सोशल चेंज इन मोर्डन इण्डिया', कोलिफोर्निया यूनिवर्सिटी प्रेस, बर्कले, 1962, पृ0सं0–6।
7. एस0एन0 श्री निवास, (अनुवादक) 'आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली–2003, पृ0सं0–21।
8. के0एम0 पणिक्कर : हिन्दू समाज चौराहे पर, बम्बई, 1955, पृ0सं0–8।
9. एम0एन0 श्रीनिवास 'आर्टिकल ऑन संस्कृताइजेशन, फार इस्टर्न क्वार्टरली', वालूम–XV नं0–4, अगस्त 1966, पृ0सं0–485।
10. गोपाल गुरू : दलित मूवमेंट इन मेनस्ट्रीम सोशियालॉजी, इकोनोमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, 13 अप्रैल 1993, पृ0सं0–570–71।
11. हेमन्त कुमार भट्टु : न्यूडायमेंशन्स ऑफ कास्ट पॉलिटिक्स इन 1990 (अप्रकाशि एम0फिल0, लघुशोध प्रबन्ध) डिपार्टमेंट ऑफ पोलिटकलसाइंस, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली,1990, पृ0सं0–62।
12. कांचा इलैच्चा (1998) : 'टूवार्डस द दलिताइजेहान ऑफ द नेशन' संकलित पार्थचटर्जी द वेजेज ऑफ फ्रीडमः फिफ्टो–इयर्स ऑफ द इंडियन नेशन–स्टेट, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, प्रेस दिल्लो, पृ0सं0–78।